डॉ. सुनीता खुराना*

अनामिका के काव्य में स्त्री-स्वर

समकालीन हिंदी कविता पर दृष्टिपात करने पर हम पाते हैं कि समकालीन कवयित्रियों की कविताओं का स्वर पहले की कवयित्रियों के काव्य-स्वर से काफी भिन्न है। इन कविताओं में पूर्व की तरह मात्र दुख और निराशा की अभिव्यक्ति नहीं है बल्कि उस पितृसत्तात्मक समाज-व्यवस्था की पहचान का प्रयत्न है जिसने अपनी वर्चस्ववादी मानसिकता के अंतर्गत सदियों से स्त्री को अस्मिताविहीन कर रखा था। समकालीन स्त्री-कविता बहुत बारीकी से पुरुषवादी समाज-संरचना के तंतुओं की पहचान करती है और उससे मुक्त होने का प्रयत्न करती है।

समकालीन स्त्री-कविता में स्त्री-अस्मिता की जो चेतना दिखाई देती है, वह अनायास नहीं है, बल्कि उसके पीछे स्त्री-अस्मिता से संबंधित चिंतनों और आंदोलनों की ऊर्जा है। यदि हम स्त्री-अस्मिता के स्वरूप को समझने का प्रयत्न करें तो अस्मिता का तात्पर्य है कि मैं हूँ अर्थात् मेरा भी अस्तित्व है। कोई मनुष्य जब अन्य से इतर स्वयं के स्व की पहचान करता है तो वहाँ से अस्मिता का बोध आरंभ होता है। वस्तुत: अस्मिता स्वयं की पहचान है। अस्मिता का तात्पर्य स्पष्ट करते हुए डॉ. रूपा सिंह ने लिखा है-

"अस्मिता की अवधारणा, आधुनिकता के साथ आने वाली वह अवधारणा है जिसका अर्थ है- 'स्व' की पहचान, अपने होने का बोध। लिंग, जाति, रिश्ते, नाते, समाज, धर्म, देश, राष्ट्र, बोली तथा व्यवसाय आदि के आधार पर मानव अपनी अस्मिता की पहचान करता है।"[1]

यदि हम विगत तीन-चार दशकों के चिंतन और कला-साहित्य को देखें तो हम पाते हैं कि उसमें स्त्री-अस्मिता संबंधी विमर्श का तीव्र उभार हुआ है। स्त्री चिंतक गरिमा श्रीवास्तव इस उभार को लक्षित करते हुए लिखती हैं-

"आज चिंतन के तौर पर स्त्री-विमर्श अपनी संपूर्ण रचनात्मकता के साथ युग-परिवर्तन की भूमिका में उपस्थित है। कला, साहित्य, मनोविज्ञान, संस्कृति सभी क्षेत्रों में स्त्री-विमर्श के विविध आयामों को देखा जा सकता है। स्त्री द्वारा रचित पाठ, स्त्री भाषा ने न सिर्फ पितृसत्तात्मक भाव और मूल्य में सेंध लगाई है, बल्कि स्त्री की दृष्टि से देखे-सुने-गुने जीवन को पाठकों तक पहुँचाकर पाठकीय रुचि को भी परिष्कृत किया है।"[2]

यदि हम इतिहास में स्त्री-अस्मिता के जड़ों को ढूंढे तो हम पाते हैं कि आरंभ में नारी-अस्मिता के प्रश्न को ज्यादा बल के साथ समाजवादियों और मार्क्सवादियों ने प्रस्तुत किया। एंगेल्स और बेबेल ने अपने नारी-संबंधी चिंतन से स्त्रियों के बारे में सोच को एक नई दिशा दी। एंगेल्स के स्त्री-चिंतन पर प्रकाश डालते हुए और उसके महत्त्व को प्रकट करते हुए सरला माहेश्वरी ने लिखा है-

"एंगेल्स ने प्रागैतिहासिक काल के मातृसत्तात्मक कबीलाई समाज में स्त्री-पुरुष संबंधों से लेकर सामंती युग और स्त्री-पुरुष संबंधों के वास्तविक रूप का विस्तृत विवेचन अपनी इस पुस्तक में अनेक प्रामाणिक संदर्भों के साथ किया है। एक पूंजीवादी परिवार में, उन्होंने स्त्री की स्थिति की तुलना सर्वहारा से तथा पुरुष की तुलना पूंजीपति से की। वहीं इसके विपरीत, एक सर्वहारा परिवार में जिसमें स्त्री और पुरुष दोनों काम करते हैं, एंगेल्स के शब्दों

में- 'पुरुष श्रेष्ठता के अंतिम अवशेषों की नींव भी खिसक जाती है।'"[3]

समय के साथ नारी-चिन्तन का विकास होता रहा और आगे चलकर मेरी वालस्टानक्राफ्ट की विख्यात पुस्तक विंडिकेशन ऑफ दी राइट्स ऑफ वूमेन ने स्त्रीवादी चिंतन की प्रथम सशक्त आधारशिला रखी। स्त्रीवादी चिंतक सरला माहेश्वरी ने इस पुस्तक के महत्त्व को प्रतिपादित करते हुए लिखा है-

"उन्होंने चार नुक्तों पर पुरुषों को चुनौती दी थी। सबसे पहले तो उन्होंने इस बात को स्वीकारने से इंकार किया कि स्त्रियाँ बुद्धि के मामले में पुरुषों से कमजोर हैं. .. उनका दूसरा नुक्ता यह था कि यदि पुरुष और महिलाएँ बुद्धि के समान अधिकारी हैं तो उसका प्रयोग करने की शिक्षा भी उन्हें समान रूप से दी जानी चाहिये।... वालस्टानक्राफ्ट का तीसरा नुक्ता यह था कि चूँकि पुरुषों और महिलाओं की समान मानसिकता ईश्वर प्रदत्त बुद्धि के अधिकार की हिस्सेदारी पर आधारित है, इसीलिये इन दोनों लिंगों के नैसर्गिक गुण भी समान होने चाहिये। मतभेद के अपने चौथे नुक्ते में वालस्टानक्राफ्ट ने समान गुणवत्ता के विचार के आधार पर समान अधिकारों की बात को उठाया है, जो आगे चलकर राजनीतिक उदारवाद की पूरी विचारधारा का एक आधार-बिंदु बन गया।"4

बीसवीं शताब्दी में क्रिस्टाबेल पैंकहर्स्ट, बेलरी ब्रायसन, सीमोन द बोउवार, बेट्टीफ्रीडेन आदि ने नारीवादी चेतना को नवीन उभार प्रदान किया। सीमोन द बोउवार ने नारीपन से मुक्ति में ही नारी-मुक्ति मानी। सीमोन के नारीवादी चिंतन का पूरे विश्व के साहित्य पर गहरा प्रभाव पड़ा। अनामिका के काव्य में निहित स्त्रीवादी स्वर की पृष्ठभूमि भी उपर्युक्त नारीवादी चिंतन में निहित है।

वस्तुतः स्त्रीवाद से प्रभावित पूरी स्त्री-कविता का स्वर पूर्ववर्ती कवयित्रियों से भिन्न है। इस कविता में पुरुषों के प्रति आराध्य-भावना नहीं दिखाई देती। इस भिन्नता को रेखांकित करते हुए अनामिका लिखती हैं-

"मध्य युग में कई महत्त्वपूर्ण महिला कवि हुईं और उन्होंने पुरुषों पर लिखा, लेकिन उन्होंने जिन पुरुषों पर लिखा वे उनके आराध्य थे, उनके काल्पनिक आदर्श, इसलिये उनको लेकन वैसा मिला-जुला भाव उनकी कविताओं में नहीं घुमड़ता जैसा आधुनिक महिला कवियों में मिलता है। प्रेम और घृणा, आक्रामण-विकर्षण, मेल और अलगाव, आह्लाद और संताप, द्वंद्व और निर्णय के बीच का यह तनाव ही दरअसल आधुनिकता-बोध की नियति है- पिछले पचास वर्ष की स्त्री-कविता में जिसकी आहटें साफ दर्ज हैं।"[5]

यदि हम अनामिका के काव्य में निहित स्त्री-स्वर का अनुशीलन करें तो हम पाते हैं कि उनकी कविताओं में स्त्री-संवेदना के कई पहलू उपस्थित हैं। अनामिका ने अपनी कई कविताओं पितृसत्तात्मक भारतीय समाज-व्यवस्था में स्त्री की स्थिति को अभिव्यक्त किया है। उनकी कविताओं में घुटन, द्वंद्व और टूटन से युक्त स्त्री-जीवन के कई संदर्भ दिखाई देते हैं। निम्नांकित पंक्तियों में स्त्री-जीवन का ऐसा ही चित्र द्रष्टव्य है-

"बुझ चुकी है आखिरी चूल्हे की राख भी,
और वह
अपने ही वजूद की आँच के आगे
औचक हड़बड़ी में
खुद को ही गूंथती हुई बार-बार
खुश है कि रोटी बोलती है जैसे पृथ्वी"[6]

हमारे पारिवारिक-सामाजिक ढाँचे में स्त्री भेदभाव का शिकार होती रही है। हमारे समाज में पुरुष और स्त्री के लिये भिन्न प्रतिमान रहे हैं। जबकि स्त्री का स्वाभाविक विकास तभी संभव है जब पुरुषों के समान उन्हें भी आत्मीयता और स्वतंत्रता मिले। किंतु वह पक्षपात का शिकार होती रही है। इस भेदभाव को अनामिका की कविता पहचानती है और उसे उजागर करती है-

"जगह-जगह क्या होती है
यह, वैसे, जान लिया था हमने,
अपनी पहली कक्षा में ही!
याद है हमें एक-एक अक्षर
आरंभिक पाठों का-
राम, पाठशाला जा!
राधा, खाना पका!
राम, आ बताशा खा!
राधा, झाड़ू लगा
...
राम, देख यह तेरा कमरा है!
'और मेरा?'
'ओ पगली',
लड़कियाँ हवा, धूप मिट्टी होती हैं

उनका कोई घर नहीं होता!"[7]

इन पंक्तियों के माध्यम से अनामिका समाज और परिवार में बचपन से ही भेदभाव के शिकार स्त्री-जीवन का चित्र उपस्थित कर देती हैं। इस भेदभाव के कारण स्त्री का सहज, स्वाभाविक और स्वतंत्र विकास संभव नहीं हो पाता और उसकी स्थिति एक गुलाम के तरह की हो जाती है।

अनामिका की कविताओं में स्त्री-विरोधी पुरुष-मानसिकता का उद्घाटन हुआ है। पितृसत्तात्मक मानसिक ढाँचे में बँधा पुरुष कभी भी स्त्री की अस्मिता को स्वीकार नहीं कर पाया। उसके लिये नारी महज एक शरीर मात्र रही। अपने अंह में डूबे पुरुष ने स्त्री-प्रतिभा को हमेशा निरादृत एवं अस्वीकृत किया। अनामिका इस पुरुष मानसिकता को उजागर करते हुए और उस पर चोट करते हुए लिखती हैं-

"क्या माथा अधोभाग से भारी होना
इतना अनुचित है- मेरे मालिक, मेरे आका?
क्या इससे मेरी बढ़ जाती है दुरुहता?
कितने बरस अभी और रहेंगे आप
इस पांचवीं कक्षा के बालक की मनोदशा में"[8]

ध्यातव्य है कि अनामिका के काव्य में जो स्त्री-स्वर मौजूद है वह पुरुष-विरोधी नहीं है बल्कि पितृसत्तात्मक ढाँचे में बद्ध स्त्री-विरोधी पुरुष-मानसिकता का विरोधी है। इस तथ्य को रेखांकित करते हुए अनामिका लिखती हैं-

"स्त्री-आंदोलन पितृसत्तात्मक समाज में पल रहे स्त्री-संबंधी पूर्वाग्रहों से पुरुषों की क्रमिक मुक्ति को असंभव नहीं मानता। दोषी पुरुष नहीं, वह पितृसत्तात्मक व्यवस्था है जो जन्म से लेकर मृत्यु तक पुरुषों को लगातार एक ही पाठ पढ़ती है कि स्त्रियाँ उनसे हीनतर हैं, उनके भोग का साधनमात्र। आंदोलन की सार्थकता इसमें है कि वहाँ-वहाँ ऊंगली रखे जहाँ-जहाँ मानदंड दोहरे हैं; विरुपण, प्रक्षेपण, विलोपन (डिस्टॉर्शन, प्रोजेक्शन, एबोलिशन) के तिहरे षड्यंत्र स्त्री के खिलाफ लगातार कारगर हैं जिनसे निस्तार मिलना ही चाहिये और सारा संघप्र इसी बात का है।"[9]

अपनी इसी अवधारणा के तहत अनामिका उन उपदानों की पहचान करती हैं जो स्त्री को सदियों से गुलाम बनाए हुए हैं। वे उस पूरे आधारभूत पितृसत्तात्मक ढाँचे को अपनी कविता में अनावृत्त करने का प्रयत्न करती हैं जिसके भीतर स्त्री एक स्वतंत्र जैविक इकाई होने से वंचित हो जाती हैं-

"अपनी जगह से गिरकर
कहीं के नहीं रहते,
केश, औरतें और नाखून
अन्वय करते थे किसी श्लोक का ऐसे
हमारे संस्कृत टीचर।
और मारे डर के जम जाती थीं
हम लड़कियाँ
अपनी जगह पर!"[10]

स्त्री-अस्मिता और स्त्री-स्वतंत्रता की बात करने वाली स्त्रियों को कई बार हमारे समाज का बुद्धिजीवी वर्ग भी अपनी जड़ संस्कारबद्धता के कारण संवेदनशीलता के साथ स्वीकार नहीं कर पाता। अनामिका के काव्य में उपस्थित स्त्री-स्वर इस स्थिति को भी उजागर करता है-

"इतना सुनना था कि अधर में लटकती हुई
एक अदृश्य टहनी से
टिड्डियाँ उड़ीं और रंगीन अफवाहें
चीखती हुई चीं-चीं
'दुश्चरित्र महिलाएँ, दुश्चरित्र महिलाएँ-
किन्हीं सरपस्तों के दम पर फूली फैली
अगरधत्त जंगली लताएँ।'
....
हे परम पिताओं
परम पुरुषों-
बख्शों, बख्शों, अब हमें बख्शों।"[11]

अनामिका अपनी कविताओं में पुरुष-वर्चस्व को तोड़ने का रचनात्मक प्रयास करती हैं। वे पुरुष-समाज की पितृसत्तात्मक मानसिकता में सेंध लगाती हैं-

"कितने बरस अभी और रहेंगे आप
इसी पाँचवीं कक्षा के बालक की मनोदशा में-
लगातार मुझे काँटते-छाँटते,
गोदी में मेरी
नन्हीं इकाइयाँ बिठाकर
वही लंगड़ी भिन्न बनाते-
तीन होल नंबर, फलां बटा फलां?
कब तक बँटना, कब तक छँटना-
देखिये मुझे अपने अंतिम दशमलव तक,
-फिर कहिये, क्या मैं बहुत भिन्न हूँ आपसे?"[12]

अनामिका की कविताओं में उपस्थित स्त्री-स्वर की

सबसे महत्त्वपूर्ण विशेषता यह है कि वह गहरी संघर्ष-चेतना से मुक्त है। उनके यहाँ पितृसत्तात्मक ढाँचे के विरुद्ध खड़ी साहसी स्त्री दिखाई देती है-

"मैं एक दरवाजा थी
मुझे जितना पीटा गया,
मैं उतनी खुलती गई।"[13]

सहायक प्राध्यापक, हिन्दी
श्यामलाल कॉलेज (सांध्य)
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
ईमेल: sunitadelhi3010@gmail.com

संदर्भ सूची

1. डॉ. रूपा सिंह, स्त्री अस्मिता और कृष्णा सोबती, पूर्वोदय प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण, पृ. 17
2. गरिमा श्रीवास्तव, बहुवचन, अंक-24, जनवरी-मार्च 2010, पृ. 124
3. सरला माहेश्वरी, नारी प्रश्न, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 1998, पृ. 22
4. वही, पृ. 15-16
5. अनामिका कहती हैं औरतें (सं. अनामिका), पृ. 11
6. अनामिका, बीजाक्षर, पृ. 14
7. अनामिका, कहती हैं औरतें, पृ. 152
8. अनामिका, अनुष्टुप, पृ. 51
9. अनामिका, कहती हैं औरतें, पृ. 9
10. वही, पृ. 152
11. वही, पृ. 166
12. वही, पृ. 157-158
13. वही, पृ. 149